बंधन – छूटन

भाग & १

‘परमात्मा’, स्वयंभू तथा कर्त्ता पुरुष होने के कारण किसी **‘बंधन’** में नहीं है। वह सही तौर पर अपनी मौज़ में **‘पूर्ण आज़ाद’** और **‘बेपरवाह’** है। ऐसे आजाद और बेपरवाह परमात्मा की अंश होने के कारण **‘आज़ादी’ जीव का जन्म&सिद्ध&अधिकार है।** इसी कारण, जीव की अन्तर&आत्मा में अनजाने ही, सदैव **इस मूल अधिकार की आकांक्षा लगी रहती है।** परन्तु जीव अज्ञानता& वश, माया के प्रभाव में काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार आदि अनेक **‘तुच्छ मानसिक वाशनाओं’ की ‘गुलामी’ में कर्म करता हुआ,** कई प्रकार के **‘बंधनों’ में फँसा रहता है तथा अपना ‘मूल अधिकार’ गंवा बैठा है।**

गुरबाणी में जीव के इन अनेक **‘बंधनों’** का स्पष्ट वर्णन हुआ है—

करम धरम सभि बंधना पाप पुंन सनबंधु ॥
ममता मोहु सु बंधना पुत्र कलत्र सु धंधु ॥ (पृ. 551)

हउमै विचि जीउ बंधु है नामु न वसै मनि आइ ॥ (पृ. 560)

इहु कुटंबु सभु जीअ के बंधन भाई
भरमि भुला सैंसारा ॥ (पृ. 602)

भूलिओ मनु माइआ उरझाइओ ॥
जो जो करम कीओ लालच लगि तिह तिह आपु बंधाइओ ॥
(पृ. 702)

मेरी मेरी धारि बंधनि बंधिआ ॥
नरकि सुरगि अवतार माइआ धंधिआ ॥ (पृ. 761)

धंधै धावत जगु बाधिआ ना बूझै वीचारु ॥ (पृ. 1010)

अनिक करम कीए बहुतेरे ॥
जो कीजै सो बंधनु पैरे ॥ (पृ. 1075)

मन के अधिक तरंग किउ दरि साहिब छुटीऐ ।। (पृ. 1088

कोटि करम बंधन का मूलु ।।
हरि के भजन बिनु बिरथा पूलु ।। (पृ. 1149)

इहु मनु धंधै बांधा करम कमाइ ।।
माइआ मूठा सदा बिललाइ ।। (पृ. 1176)

सरवर पंखी हेकड़ो **फाहीवाल पचास ।।**
इहु तनु लहरी गडु थिआ सचे तेरी आस ।। (पृ. 1384)

चाहे हम समझते रहें हैं कि हम 'स्वतन्त्र' हैं तथा मनमर्जी कर सकते हैं, परन्तु यह सच नहीं। वास्तव में हम **कई प्रकार के बंधनों में जकड़े हुए हैं।** हम सभी जीव तथा समस्त सृष्टि कर्त्ता पुरुष की कृति हैं तथा उसके दिव्य 'हुकुम', 'भाणा' कुदरत की रज़ा (Divine order or discipline) में बंधे हुए है। सिवाये मनुष्य के — 84 लाख योनियाँ, इस दिव्य हुकुम की 'रज़ा', भाणा अथवा 'एक सुरता' (in tune) में विचरण कर रहीं हैं। इसी कारण इन जीवों की प्रगति (evolution) हो रहीं है। इन 84 लाख योनियों के जीवों में बुद्धि सीमित (limited) होने के कारण, ये अपनी मति या चतुराई का प्रयोग नहीं कर सकते। इसीलिए 'परमात्मा की रज़ा' में चल रहे हैं (in tune with the infinite) तथा **'हुकुम'** से बाहर नहीं जा सकते। परन्तु मनुष्य को प्रभु ने विशाल तथा तीक्ष्ण बुद्धि प्रदान की है। हम, इस तीक्ष्ण बुद्धि का अपने मन की रंगत तथा संस्कारों के अधीन, अपनी उक्तियों, युक्तियों तथा चतुराई द्वारा, **गलत प्रयोग करते हैं।** इस प्रकार, हम 'कर्म&बद्ध' होकर, स्वयं घड़े **संस्कारों के बंधनों** में फँस कर दुखी हो रहे हैं।

गुरू साहिबान ने बाणी में जीव के इन **'बंधनों'** के विषय में यूँ ताड़ना की है —

मेरे जीअड़िआ परदेसीआ कितु पवहि जंजाले राम ।। (पृ. 439)

जाली रैनि जालु दिनु हूआ **जेती घड़ी फाही तेती ।।**
रसि रसि चोग चुगहि नित फासहि छूटसि मूड़े कवन गुणी ।। (पृ. 990)

फिरि फिरि फाही फासै कऊआ ।।
फिरि पछुताना अब किआ हूआ ।। (पृ. 935)

गुरबाणी तथा अन्य अनेक महापुरुषों की ताड़ना के बावजूद, जीव **कई प्रकार**

के 'बंधनों' में फँसा हुआ है। परन्तु इन **'बंधनों'** के प्रति **अनजान होने के कारण**, मनुष्य यह समझता है कि मैं आजाद हूँ तथा मुझे कोई बंधन नहीं है। इसलिए इन **'मानसिक बंधनों' से छूटने का कोई यत्न भी नहीं कर रहा है।** अपितु अपनी अज्ञानता द्वारा गलत कर्म करता हुआ, अचेत ही, **नित्य नवीन dek की जंजीरें घड़़घड़ कर 'बंधनों' में जकड़ा जा रहा है तथा पुरानी जंजीरों को और शक्तिशाली बना रहा है।**

नानक अउगुण जेतड़े तेते गली जंजीर ।। (पृ. 595)

जीव को सुचेत करने के लिए गुरबाणी में इन कई प्रकार के **'बंधनों'** को खोलकर दर्शाया गया है, तथा इनसे **बचने** तथा **छूटने** के साधन भी बताये गये हैं।

आईये ! हम अब इन **इन्सानी बंधनों** की कुछ किस्मों पर विचार करें —

1. **अहम् का बंधन — 'अहम्' हमारे dek तथा बंधनों का मूल कारण है।** यदि हम दिव्य हुकुम की 'रज़ा' में चलने की विधि सीख लें, तब हम अहम् मयी dek के 'बंधन' से बच सकते हैं। परन्तु हमारे लिए **'रज़ा' में चलना** तो दूर, हमें तो अभी **'ईश्वरीय हुकुम' की सूझ भी नहीं।**

   हुकमै अंदरि सभु को बाहरि हुकम न कोइ ।।
   नानक हुकमै जे बुझै त हउमै कहै न कोइ ।। (पृ. 1)

इसी कारण—

हउमै विचि जीउ बंधु है नामु न वसै मनि आइ ।। (पृ. 560)

हउ हउ करत बंधन महि परिआ
नह मिलीऐ इह जुगता ।। (पृ. 642)

वाली दशा प्रवृत्त है।

ईश्वरीय 'हुकुम' हमारे लिए सुखदायी तथा कल्याण रूप है। शेष समस्त योनियों के जीव अचेत ही सहज स्वभाव इस हुकुम में चल रहे हैं। इसी लिए मनुष्य से अधिक **आज़ाद** तथा सुखी हैं व कर्म बद्ध नहीं हैं।

वास्तव में, 'अहम्' से भाव है — अपने आप को **अकाल पुरुष की 'अंश' समझने** की बजाये, **एक 'पृथक' अस्तित्व समझना।** जीव अपने 'अहम्' में ही

जन्म लेता है, अहम् मयी कर्म करता हुआ, जंजालों में फँसता हुआ, काल के वश पड़कर आवागमन के चक्र में फँसा रहता है।

एहु सरीरु माइआ का पुतला **विचि हउमै दुसटी पाई ॥**
आवणु जाणा जंमणु मरणा मनमुखि पति गवाई ॥ (पृ. 31)

दुखि सुखि एहु जीउ बधु है हउमै करम कमाइ ॥ (पृ. 67)

बाधिओ आपन हउ हउ बंधा ॥
दोसु देत आगह कउ अंधा ॥ (पृ. 258)

हउ विचि आइआ हउ विचि गइआ ॥
हउ विचि जंमिआ हउ विचि मुआ ॥
हउ विचि दिता हउ विचि लइआ ॥
हउ विचि खटिआ हउ विचि गइआ ॥
हउ विचि सचिआरु कूड़िआरु ॥
हउ विचि पाप पुंन वीचारु ॥
हउ विचि नरकि सुरगि अवतारु ॥
हउ विचि हसै हउ विचि रोवै ॥
हउ विचि भरीऐ हउ विचि धोवै ॥
हउ विचि जाती जिनसी खोवै ॥
हउ विचि मूरखु हउ विचि सिआणा ॥
मोख मुकति की सार न जाणा ॥
हउ विचि माइआ हउ विचि छाइआ ॥
हउमै करि करि जंत उपाइआ ॥
हउमै बूझै ता दरु सूझै ॥
गिआन विहूणा कथि कथि लूझै ॥
नानक हुकमी लिखीऐ लेखु ॥
जेहा वेखहि तेहा वेखु ॥ (पृ. 466)

हउमै एहा जाति है **हउमै करम कमाहि ॥**
हउमै एई बंधना फिरि फिरि जोनी पाहि ॥ (पृ. 466)
हंउमै अंदरि खड़कु है खड़के खड़कि विहाइ ॥
हंउमै वडा रोगु है मरि जंमै आवै जाइ ॥ (पृ. 592)

पूजा अरचा बंदन डंडउत खटु करमा रतु रहता ॥
हउ हउ करत बंधन महि परिआ नह मिलीऐ इह जुगता ॥ (पृ. 642)

हउ हउ करम कमाणे ॥
ते ते बंध गलाणे ॥ (पृ. 1004)

2. **'मैं&मेरी' अथवा अहम् की 'भावना' के बंधन —**

'मैं&मेरी' का ख्याल अहम् में से ही उत्पन्न होता है। **'मैं&मेरी' की भावना** दिन&रात, सपने में भी, हमारे साथ **चिपकी रहती है। इस अहम् मयी 'भावना' के अधीन हम कर्म करते तथा परिणाम भोगते हुए दुखी होते रहते हैं।**

भलि&भाँति जानते हुए कि यह शरीर, यह माल&धन, रिश्तेदार&सम्बंधी, ज़मीन&जायदाद, सब कुछ नश्वर हैं तथा इन में से कुछ भी साथ नहीं जाना, फिर भी जीव **इन्हें अपना समझ कर 'गले लगाकर' बैठा है तथा 'मैं&मेरी' के बंधनों में जकड़ा** हुआ है। इन नश्वर inkFkk से **'अपनत्व' जताना** हमारे मानसिक **भ्रम&भुलाव का परिणाम है।**

दूसरे शब्दों में, **'मैं&मेरी' का दृढ़ हुआ 'निश्चय' ही जीव के समस्त दुख, क्लेश, चिंता&फिकर का मूल कारण है।**

इहु धनु संपै माइआ झूठी अंति छोडि चलिआ पछुताई ॥(पृ. 77)

मेरा मेरा करि करि विगूता ॥
आतमु न चीन्है भरमै विचि सूता ॥ (पृ. 362)

बंधन अंध कूप ग्रिह मेरा ॥ (पृ. 388)

मेरा तेरा जानता तब ही ते बंधा ॥ (पृ. 400)

मेरी मेरी धारि बंधनि बंधिआ ॥
नरकि सुरगि अवतार माइआ धंधिआ ॥ (पृ. 761)

मेरी मेरी करि करि मूठउ
पाप करत नह परी दइआ ॥ (पृ. 826)

मेरी मेरी धारी ॥
ओहा पैरि लोहारी ॥ (पृ. 1004)

माइआ मोहु दुखु सागरु है बिखु दुतरु तरिआ न जाइ ॥
मेरा मेरा करदे पचि मुए हउमै करत विहाइ ॥ (पृ. 1417)

3. शारीरिक बंधन —

शरीर अपने आप में कोई कर्म नहीं कर सकता। यह हमारे ख्यालों, भावनाओं, मनोभावों तथा आदतों के **प्रकटाव का साधन है।**

किसी ख्याल या कर्म का, शरीर द्वारा बार-बार **अभ्यास** किया जाये, **तब शरीर** को उस कर्म की **'आदत' पड़ जाती है** तथा वह कर्म **हमारा 'स्वभाव' बन जाता है।** यदि हम इन अनावश्यक तथा हानिकारक हरकतों को रोकना भी चाहें, तब भी शरीर अपनी **दृढ़ हुई आदतों के अनुसार सहज-स्वभाव अनजाने ही वह हरकतें करता रहता है। इस प्रकार हम स्वयं रची हुई 'आदतों' के 'गुलाम' बन जाते हैं, जिन से छुटकारा पाना कठिन है।**

इस विषय को स्पष्ट करने के लिए कुछ उदाहरण दिये जाते हैं —

मानव-जन्म दुर्लभ तथा अनमोल है। इसकी देखभाल करना, इसे रोग रहित रखना तथा हृष्ट-पुष्ट बना कर कुदरत अनुसार इससे उचित काम लेना हमारा उद्धेश्य है। परन्तु हम सादे तथा पौष्टिक आहार की अपेक्षा — चटपटे, मसालेदार तथा स्वाद-भरे पदार्थ खाने के आदी हो रहे हैं, जैसे — परौठें, पूड़ियाँ, समोसे, पकोड़े, आचार, चटनियाँ, माँस आदि। ये **हमारे स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हैं।** यदि हमें पता भी लग जाये कि ये हानिकारक हैं तथा इन्हें **छोड़ना** चाहें, तो भी **इन का त्याग नहीं कर सकते।** इस प्रकार हम **रसना की चेष्टा के 'गुलाम' बन जाते हैं** — जिस से कई प्रकार के रोग लगा लेते हैं।

इसी प्रकार शराब या तम्बाकू आदि नशीली वस्तूओं के सेवन की आदत पड़ जाती है। **जिस के हानिकारक परिणाम भोगते हुए भी, इन्हें छोड़ नहीं सकते तथा स्वयं अंगीकृत इन की 'गुलामी' में जकड़े रहते हैं** तथा दुख, क्लेश, बीमारी आदि भोगते हैं।

कई प्रकार के नशों में भी, कई जीव जकड़े हुए है, जैसे — अफीम, चरस, गांजा, सुॅखा, हैरोइन (heroin), नशीली गोलियाँ आदि, जो हमारे जीवन को तबाह कर रहे हैं। पश्चिमी देशों की तथाकथित नवीन सभ्यता भी, इस **'नशीली-गुलामी' से बच नहीं**

सकी, वह तो अन्य देशों का नेतृत्व कर रही हैं।

कई जीव **तुच्छ वाशनाओं की गुलामी** में फँसकर कई प्रकार के पाप करते हैं तथा **ला इलाज बीमारियाँ लगा लेते हैं,** जिस से अपना अमूल्य जीवन तबाह कर रहे हैं।

ये वाशनाँए, सर्व&व्यापक हैं। क्योंकि सभी सम्प्रदायों, जाति&पाति तथा देशों के लोग **इन वाशनाओं की 'गुलामी' में बुरी तरह जकड़े हुए हैं** तथा इनमें ख्वार होकर अत्यन्त दुख&क्लेश भोगते हुए भी, **इन से बच नहीं सकते,** मुक्त नहीं हो सकते तथा नरकमय जीवन भोगते हैं।

तुच्छ रुचियों तथा **वाशनाओं** के बार&बार भोग अथवा **अभ्यास से, ये शक्तिमान** (dynamic) **बन जाती हैं।** ये **शक्तिमान वाशनाएँ हमारे मन पर इतना 'कब्ज़ा' कर लेती हैं** कि हमारी सोच विचार, ज्ञान&ध्यान, कर्म&क्रिया भी **इन शक्तिशली संस्कारों को 'काबू' करने में असमर्थ हैं।**

इसी प्रकार हमारी उच्च विद्या, विज्ञान तथा फिलोस्फियाँ भी इन शक्तिशाली वाशनाओं को काबू नहीं कर सकी — अपितु ज्यों&ज्यों **तथाकथित नवीन सभ्यता** (modern civilization) **उन्नति कर रही है, त्यों&त्यों हमारी 'वाशनाएँ' भी और सूक्ष्म तथा 'विकसित' हो रही हैं।**

गिआनु धिआनु सभु कोई रवै ॥
बांधनि बांधिआ सभु जगु भवै ॥ (पृ. 728)

आश्चर्य की बात तो यह है कि इन शक्तिमान तुच्छ वाशनाओं पर काबू पाने में हमारे तथाकथित **'धर्म' भी असमर्थ हो गये हैं** अपितु धर्म की आड़ में ये वाशनाएँ प्रफुल्लित हो रही हैं।

बिखै बिखै की बासना तजीअ नह जाई ॥
अनिक जतन करि राखीऐ फिरि फिरि लपटाई ॥(पृ. 855&856)

कई लोगों को हर शब्द के संग, कोई निरर्थक शब्द जोड़ने या **गाली निकालने की आदत पड़ जाती है** — जिसे **'तकिया&कलाम'** कहा जाता है। ये व्यर्थ तथा हास्यप्रद शब्द हमारी 'गुफ्तार' अथवा 'बोली' को भी हास्यप्रद बना देते हैं।

उदाहरण के रूप में, एक बड़ी उम्र का डाक्टर संगति में आया। वह अपनी आदत अनुसार हर बात के साथ एक **नंगी गाली** जोड़ देता था। जब उसका ध्यान इस बात की ओर दिलाया गया, तब वह तुरन्त गाली देकर बोला............ कौन गाली निकालता है। इस से सिद्ध होता है कि उस पढ़े-लिखे सयाने डाक्टर को **इन नंगी गालियों का अहसास ही नहीं रहा था।** वह अपनी सभ्यता हीन गंदी आदत का इतना **'आदी' हो गया था कि 'गाली' देना उसके जीवन का अंग बन गया था।**

गाँवों में तो लोग **'गाली' दिए बिना कोई बात ही नहीं करते।** जिससे हमारी तुच्छ सभ्यता प्रकट होती है तथा जिसका प्रभाव **भावी पीढ़ियों पर पड़ना भी निश्चित है।**

उपरोक्त उदाहरण सिद्ध करते हैं कि हम **स्वयं घड़ी आदतों की गुलामी में विवश हुए रहते हैं,** जिसका हमें 'अहसास' भी नहीं है, छूटने का ख्याल तो क्या आना था। इसी प्रकार **हमारा शारीरिक 'धोना-करना' श्रृंगार, रस, स्वाद, चेष्टा, सब बंधन ही हैं।** हमारे जीवन का बहुत सा ध्यान तथा समय शरीर के धोने-करने, सजने-सँवरने, पालन-पोषण, **हार-श्रृंगार** (make-up) में नष्ट हो जाता है।

शारीरिक 'अस्तित्व' का अहसास तथा इस की विशेषता (importance) **ही हमारे मन, बुद्धि और ध्यान का केन्द्र है,** इसलिए हमारा **शरीर भी हमारे 'बंधनों' का एक कारण है।**

नानक अउगुण जेतड़े तेते गली जंजीर ॥ (पृ. 595)

एहु सरीरु सभ मूलु है माइआ ॥
दूजै भाइ भरमि भुलाइआ ॥ (पृ. 1065)

जेते रस सरीर के तेते लगहि दुख ॥ (पृ. 1287)

4. **कर्म-काण्ड तथा वहमों के बंधन** — इतनी नवीन विद्या, धार्मिक ज्ञान तथा **फिलोस्फियों के होते हुए** आज भी हम पुराने वहमों **(superstitions)** के आधार पर अनेक कर्म-काण्डों तथा वहमों में फँस कर

दुखी हो रहे हैं। खेद तो इस बात का है कि हमारे विद्वान तथा **ज्ञानी-ध्यानी भी इन वहमों के 'बंधन' से छूट नहीं सके।** हम देखा-देखी, अनजाने अनावश्यक लोक-दिखलावे के लिए कर्म-काण्ड के बंधन में पड़े रहते हैं।

दूसरे शब्दों में ज्यों-ज्यों हमारी विद्या, विज्ञान, फिलोस्फी, तथाकथित सभ्यता तथा तथाकथित /keZ का **विकास** हो रहा है — **त्यों-त्यों हमारी शारीरिक मानसिक तथा धार्मिक अवस्था 'गिरती' जा रही है तथा हम इन भाँति-भाँति के 'बंधनों' में फँस कर अमूल्य जीवन व्यर्थ गंवा रहे हैं।**

सुना है कि भारत में लगभग एक करोड़ तथाकथित साधू, संत, फकीर, औलीऐ, दिगम्बर, गुरू, धर्म के ठेकेदार बने हुए हैं, परन्तु वे स्वयं ही अनेक प्रकार के **फोकट कर्म-क्रिया के 'बंधनों' में फँसे हुए हैं तथा अन्य जिज्ञासुओं को भी फँसा रहे हैं।**

गुरबाणी में इन 'कर्म-काण्ड' तथा 'वहमों' का चित्र यूँ खींचा गया है —

सासत सिंम्रिति बेद चारि मुखागर बिचरे ॥
तपे तपीसर जोगीआ तीरथि गवनु करे ॥
खटु करमा ते दुगुणे पूजा करता नाइ ॥
रंगु न लगी पारब्रहम ता सरपर नरके जाइ ॥ (पृ. 70)

पाठु पड़िओ अरु बेदु बीचारिओ निवलि भुअंगम साधे ॥
पंच जना सिउ संगु न छुटकिओ अधिक अहंबुधि बाधे ॥
पिआरे इन बिधि मिलणु न जाई मै कीए करम अनेका ॥
हारि परिओ सुआमी कै दुआरै दीजै बुधि बिबेका ॥ रहाउ ॥
मोनि भइओ करपाती रहिओ नगन फिरिओ बन माही ॥
तट तीरथ सभ धरती भ्रमिओ दुबिधा छुटकै नाही ॥
मन कामना तीरथ जाइ बसिओ सिरि करवत धराए ॥
मन की मैलु न उतरै इह बिधि जे लख जतन कराए ॥
कनिक कामिनी हैवर गैवर बहु बिधि दानु दातारा ॥
अंन बसत्र भूमि बहु अरपे नह मिलीऐ हरि दुआरा ॥
पूजा अरचा बंदन डंडउत खटु करमा रतु रहता ॥

हउ हउ करत बंधन महि परिआ नह मिलिए इह जुगता ।।
जोग सिध आसण चउरासीह ए भी करि करि रहिआ ।।
वडी आरजा फिरि फिरि जनमै **हरि सिउ संगु न गहिआ** ।। (पृ. 641)

काहू लै पाहन पूज धरयो सिर
काहू लै लिंग गरे लटकाइओ ।।
काहू लखिओ हरि अवाची दिसा महि
काहू पछाह को सीसु निवाइओ ।।
कोऊ बुतान को पूजत है पसु
कोऊ म्रितान को पूजन धाइओ ।।
कूर क्रिआ उरझिओ सभ ही जग
स्री भगवान को भेदु न पाइओ ।। (सवये पा. 10)

5. राजसीय बंधन :—

चाहे हम राजसीय रूप से दूसरे देश की गुलामी से आजाद हैं, परन्तु हम अपनी नौकरशाही, रिश्वत खोरी, ब्लैक, मिलावट, कुनबा-परस्ती, तानाशाही, पार्टीबाजी आदि के **'बंधनों' में अभी भी बुरी तरह जकड़े हुए हैं।** हमारा बहुत सा समय तथा शक्ति इस **तुच्छ राजसीय तनाव में ही लगती है।**

कलि काती राजे कासाई धरमु पंख करि उडरिआ ।।
कूड़ु, अमावस सचु चंद्रमा दीसै नाही कह चड़िआ ।। (पृ. 145)
दरसनि देखिऐ दइआ न होइ ।। लए दिते विणु रहै न कोइ ।।
राजा निआउ करे हथि होइ ।। कहै खुदाइ न मानै कोइ ।। (पृ. 350)
राजु कहावै हउ करम कमावै बाधिओ नलिनी भ्रमि सूआ ।। (पृ. 407)

राजे सीह मुकदम कुते ।।
जाइ जगाइन्हि बैठे सुते ।।
चाकर नहदा पाइन्हि घाउ ।।
रतु पितु कुतिहो चटि जाहु ।। (पृ. 1288)

हमारे जीवन के हर पक्ष अथवा रग-रग में ये **आचरणहीन निम्न रुचियाँ धँस-बस-समा चुकी हैं** तथा हम इनके अनावश्यक 'बंधनों' से अत्यन्त दुखी हो रहे हैं।

हमारा देश **'/kek' का 'पालना'** माना गया है, परन्तु इसी देश में यह **नैतिक गिरावट अत्यन्त बढ़ रही है।**

हमारे /kek ने इस नैतिक गिरावट (moral degeneration) से **ऊँचा उठना था,** परन्तु जब हमारे तथाकथित धर्म भी इन कूड़ कर्म-क्रिया के वहमों में फँसे हुए हैं, तब जनता बेचारी का क्या हाल !

बाहरि की अगनि जयों बुझै जल सरिता कै
  नाउ मे जौ आग लागै कैसे कै बुझाईऐ ।
बाहर सैं भाग ओट लीजीअत कोट गड़
  गड़ मै जौ लूट लीजै कहो कत जाईऐ ।
चोरन कै त्रास जाए सरन नरिंद गहै
  मारै मही पति जीउ कैसे कै बचाईऐ ।
माया डर डरपत हार गुर द्वारे जावै
  तहां जो विआपै माया कहां ठहिराईऐ । (क. भा. गु. 544)

6. दुनियादारी के (social) बंधन —

हम सभी **दुनियादारी, रीति-रिवाजों** (rituals) **के 'बंधन' में जबरदस्त जकड़े हुए हैं** तथा अति दुखी होने के बावजूद इन रीति-रिवाजों को कम करने या छोड़ने की अपेक्षा, **बढ़ाये जा रहे हैं।** हमारे जन्म, मरण, सगाई-विवाह तथा अन्य अनेक सामाजिक त्यौहारों को हमनें अत्यंत पेचीदा, विस्तृत, दिखावटी व खर्चीला बना दिया है। इससे परेशानी के अतिरिक्त फ़िज़ूल खर्च के भार से दब कर जनता दुखी हो रही है।

बावजूद हमारी शिक्षा, नवीन सभ्यता (modern civilization) तथा वैज्ञानिक विचारों (scientific thinking) के हमने इन निरर्थक तथा दुखदायी रीति-रिवाजों (rituals and traditions) को **तोड़ने की हिम्मत तो क्या करनी थी,** अपितु और **बढ़ा चढ़ा कर व्यर्थ दिखलावे की दौड़** (competition) **लगायी हुई है।**

इन निरर्थक तथा दुखदायी रीति-रिवाजों का एक उदाहरण दिया जाता है—

पिछले ज़माने में जब लड़की का रिश्ता किया जाता था, तो केवल एक रुपया 'शगुन' दे कर सगाई की जाती थी। अब सगाई का रिवाज हमने इतना बढ़ा लिया

है कि पहले **'रोका'** फिर **'ठाका'** तथा फिर **'शगुन' दिया जाता है।** सगाई तथा विवाह के अन्य रिवाज मनमर्जी से बढ़ाये जा रहे हैं तथा इतना दिखलावा तथा फ़िज़ूल खर्च किया जाता है कि हैरान हो जाते हैं। इन की पूर्ति में हर व्यक्ति एक दूसरे से बढ़&चढ़ कर (compete) **दिखावा करने का प्रयत्न करता है,** जिससे लड़के वालों की भूख भी देखा&देखी बढ़ती जाती है। इस प्रकार हमारा समाज (society) इन **सामाजिक बंधनों** में फँस कर कमज़ोर तथा दुखी हो रहा है। परिणाम स्वरूप गरीब के लिए लड़की का विवाह करना **अति कठिन तथा 'मंहगा' होता जा रहा है।** यदि हमारे **दिखलावे की मानसिकता तथा 'दहेज' की भूख इसी प्रकार बढ़ती गयी,** तब वह समय शीघ्र आयेगा जब लोग दुखी होकर **लड़कियों को पैदा होते ही मार दिया करेंगे ।** जैसे पुराने समय में मुगलों के अत्याचार से बचने के लिए किया जाता था। परन्तु खेद की बात यह है कि हमारे ज्ञानी, ध्यानी, विद्वान, धार्मिक नेता, समाज सुधारक इन व्यर्थ दिखलावे तथा **'दुखदायी बंधनों' को रोकने या कम करने की बजाये, स्वयं ही इस ओर बहते जा रहे हैं।** कितनी दुखदायी बात है कि **आजकल की नवीन सभ्यता** (modern civilization) **में भी कई मासूम लड़कियाँ — इन व्यर्थ रिवाजों के बंधनों के कारण आत्महत्या करने पर मजबूर हो जाती हैं तथा दहेज के 'अंगीठे' पर कुरबान की जाती हैं।**

आजकल गर्भ में बच्चे के विषय में निर्णय किया जा सकता है। यदि गर्भ में **मादा बच्ची** का पता लग जाये, तब वह **गर्भ नाश किया जाता है।** दूसरे शब्दों में, **'दहेज' के बुरे रिवाजों से बचने के लिए, अजन्मी बच्ची का 'खून' किया जाता है तथा इसे पाप नहीं समझा जाता।**

इन पारम्परिक 'सामाजिक बंधनों' में हम इतने गलतान हो गये हैं कि माँ&बाप को इस पाप&पुण्य का अहसास ही नहीं रहा। **ऐसे निर्दयी अत्याचारी 'पाप' केवल हमारे देश में ही होते हैं — जहाँ मौजूदा /kek की भरमार है।** दूसरे देशों में लड़की तथा लड़के में कोई अन्तर नहीं समझाा जाता। इसलिए लड़की के साथ यह अत्याचार नहीं होते । यह **'दहेज के बंधन' हमने स्वयं बनाये हैं, जिससे हम अत्यन्त दुखी होते हैं तथा पाप कमाते हैं।**

ऐसे **'रीति-रिवाज'** हमने स्वयं ही, अथवा हमारे समाज द्वारा ही बनाये जाते हैं।

प्रत्येक जाति-पाति-सम्प्रदाय-देश में यह **'रीति-रिवाज'** अलग-अलग प्रकार के होते हैं तथा बदलते भी रहते हैं।

हम इन **व्यर्थ तथा बेमाने रीति-रिवाजों अथवा वहमों से अत्यन्त दुखी होते रहते हैं।**

यह सामाजिक रीति-रिवाजों के बंधन **'धार्मिक नियम'** अथवा **'सरकारी कानून' की मजबूरी भी नहीं है।**

फिर भी इन्हें **तोड़ने** या **बदलने** का हमें **साहस** नहीं होता — क्योंकि हम **'दुनियादारी'** अथवा **'लोकाचारी' के बंधनों में जबरदस्त जकड़े हुए हैं।**

7. **ज्ञान** (philosophy) **के बंधन —** यह अति सूक्ष्म जंजीर है, जिसकी ज्ञानवान तथा विद्वानों को **स्वयं सूझ नहीं है,** क्योंकि मन को दिमागी ज्ञान अथवा फिलोस्फी की **पर्त चढ़ी होती है।**

घने जंगल में जानवरों के पैरों से इधर-उधर सब तरफ अनेक पगडंडियां बनी होती हैं, जिनकी कोई दिशा नहीं होती।

यदि कोई इन्सान ऐसे घने जंगल में घुस जाये, तब वह जंगल के इस **'गोरख धंधे'** में फँस जाता है तथा जंगल में से निकलना असम्भव हो जाता है।

इसी प्रकार तीक्ष्ण बुद्धि की 'बाल-की-खाल' निकालने वाली पेचीदा फिलोस्फियों के जंगल में यदि मन फँस जाये तो इसमें से निकलना असम्भव होता है। **यदि एक नुक्ता या शंका हल होता है, तब दस और शंके खड़े हो जाते हैं।**

इस का कारण यह है कि ज्ञानी या फिलोस्फर प्रत्येक नुक्ते को अपनी तीक्ष्ण बुद्धि से परखता, तोलता तथा निष्कर्ष निकालता है। हम बुद्धि मंडल वाले 'क्या', 'क्यों' तथा 'कैसे' (what, why and how) की खोज (analysis) में इतने धँसे हुए हैं कि मूल **'वास्तविक नुक्ता' पड़ा ही रह जाता है या भूल जाता है।**

यह सारा त्रिगुण **बुद्धि मंडल का खेल है —** जिस में हमारा मन गलतान हुआ रहता है तथा हम अपनी-अपनी **सीमित 'बुद्धि' के ज्ञान या फिलोस्फी में कैद हुए रहते हैं।**

जब तक गुर प्रसादि द्वारा साध संगति में विचरण करते हुए, हमारी अन्तर आत्मा में **'अनुभवी ज्ञान'** नहीं उत्पन्न होता— तब तक हम अपने सीमित बुद्धि-मंडल के भ्रम-भुलाव के **'बंधनों'** में ही विचरते रहेंगे तथा आत्म मंडल की अनुभवी झल्कों, रस, रंग, प्रेम स्वैपना से वंचित रहेंगे।

जेती सिआनप करम हउ कीए तेते बंध परे ॥ (पृ. 214)

सिआनप काहू कामि न आत ॥
जो अनरूपिओ ठाकुरि मेरै होइ रही उह बात ॥ (पृ. 496)

पड़ि पड़ि भूलहि चोटा खाहि ॥
बहुतु सिआणप आवहि जाहि ॥ (पृ. 686)

गिआनु धिआनु सभु कोई रवै ॥
बांधनि बांधिआ सभु जगु भवै ॥ (पृ. 728)

अनिक जतन नही होत छुटारा ॥
बहुतु सिआणप आगल भारा ॥ (पृ. 178)

बहुतु सिआणप जम का भउ बिआपै ॥ (पृ. 265)

भाई साहिब डा. वीर सिंह ने इन दिमागी ज्ञानियों के लिए बहुत सुन्दर कटाक्ष प्रयोग किया है—

'बैठ वे ज्ञानी बुधी मंडल दी कैद विच,
वलवले दे देश साडीआं लग गईआं यारीआं'

इसी प्रकार एक स्थान पर और बहुत सुन्दर विचार प्रकट किया है —

'की होया, ते की कूं होया, खप-खप मरे सियाणे।
तूं क्यों पवें उस राह जिंदें, जिस राह पूर मुहाणे ।
भटकण छड 'लटक' ला इको, खीवी हो सुख माणी।
होशा नालो मसती चंगी, रखदी सदा टिकाणे ।"

8. फैशन की गुलामी —

प्रकृति में **नवीनता की सहज चाल** है। इस चाल अनुसार प्रत्येक वस्तु सहज ही **'हुकुम' की चाल में,** बदलती रहती है, जिस अनुसार जीवों को अपना-अपना जीवन ढालना पड़ता है।

पुराने ज़माने में नवीनता अथवा 'फैशन' की चाल बहुत **'धीमी'** होती थी तथा पुराने फैशन को त्यागने तथा नये फैशन को अपनाने की चाल **'धीरे'** होती थी। इसी प्रकार पुराने फैशन के कपड़े आदि प्रयोग कर नये फैशन के कपड़े सिलवाये जाते थे ।

परन्तु आजकल इन्सानों की **'जीवन चाल' बहुत तेज़ हो गयी है** तथा साथ ही **हमारे 'फैशन'** भी **जल्दी-जल्दी बदलते रहते हैं। पिछले फैशन के कपड़े पहनने का 'चाव' अभी पूरा भी नहीं होता कि और नित्य-नवीन फैशन चल पड़ते हैं ।** इस प्रकार हमें **पिछले फैशन के कपड़े, बिना ज्यादा पहने ही त्यागने पड़ते हैं।**

फैशन की बदलती चाल के कुछ उदाहरण दिये जाते हैं —

हमारे देखते-देखते स्त्रीयों की 'कमीजें' घुटने तक लम्बी होती थी, फिर धीरे-धीरे और लम्बी होती गयी तथा टखनों तक पहुँच गयीं। कुछ समय पश्चात ये कमीजें ऊपर चढ़ती-चढ़ती फिर घुटने तक आ गयी।

इसी प्रकार पुरुषों की पैंटे (pants) पहले **बहुत तंग** होती थी तथा आल्थी-पाल्थी लगाकर बैठना भी बहुत कठिन होता था, फिर इन 'पैंटों' के फैशन बदल गये तथा पौचें 24 इन्च के हो गये — जिस कारण चलते-चलते कई बार पौचें में पैर फँस कर गिर पड़ते थे। शीघ्र ही इन चौड़ी पैंटों ने 'घंटी' की (bell-bottom) शक्ल धारण कर ली — जो घुटनों से तंग होती थी तथा नीचे से पौचें 24 इन्च से भी खुले होते थे। आजकल ये पैटें पौचों से तंग तथा ऊपर से खुली हो गयी हैं।

पहले हमारी पगड़ियाँ एक **'पन्ने'** की चौड़ी होती थी, अब नवीन फैशन अनुसार **'दुहरे पन्ने'** की चौड़ी पगड़ियों का रिवाज है।

इन फैशनों के जल्दी-जल्दी बदलने से हमारा **अत्यधिक धन, ध्यान, समय तथा शक्ति इस फैशन परस्ती अथवा फैशन की गुलामी में बरबाद (waste) हो रही है।**

कपड़ों के फैशन के अतिरिक्त, हमारे **'हार-श्रृंगार'** (make-up) के फैशनों में बहुत जल्दी-जल्दी परिवर्तन हो रहा है।

अनगिनत प्रकार के पाउडर (powder), क्रीम (cream) रंग (colouring) आदि हार-श्रृंगार के साधनों से दुकानें भरी हुई हैं।

इस हार&श्रृंगार के फैशन को हमने बहुत विस्तृत कर लिया है, जिस कारण **हमारा बहुत सा ध्यान, समय तथा पैसा नष्ट हो रहा है।**

हम **सादा जीवन तथा उच्च विचार** (simple living and high thinking) के उत्तम सुखदायी उपदेशों को **त्यागकर — तुच्छ वाशनाओं के अधीन होकर 'फैशन&परस्ती' में शारीरिक, मानसिक तथा आर्थिक पक्षों से दुखी हो रहे हैं।**

बाबा होरु खाणा खुसी खुआरु ॥
जितु खाधै तनु पीड़ीऐ मन महि चलहि विकार ॥ (पृ. 16)

चोआ चंदनु अंकि चड़ावउ ॥
पाट पटंबर पहिरि हढावउ ॥
बिनु हरि नाम कहा सुखु पावउ ॥1 ॥
किआ पहिरउ किआ ओढि दिखावउ ॥
बिनु जगदीस कहा सुखु पावउ ॥1 ॥ रहाउ॥
कानी कुंडल गलि मोतीअन की माला ॥
लाल निहाली फूल गुलाला ॥
बिनु जगदीस कहा सुखु भाला ॥2॥ (पृ. 225)

इसी प्रकार हमारे **खाने&पीने में भी 'फैशन' आ घुसा है।** सादा&स्वच्छ&सुखदायी&स्वास्थयकारी भोजन के स्थान पर, हम प्रभु द्वारा प्रदान देनों को **तलकर&भूनकर, भाँति&भाँति के चटपटे मसालों से लैस कर, उनके प्राकृतिक लाभदायक अंशों (vitamins etc) को नष्ट करके अपनी रसना की 'चेष्टा' पूरी करते हैं।**

उदाहरण के रूप में — पूड़ियाँ, कचौरियाँ, पकौड़े, परौंठे, आचार, मुरब्बे, केक, मीट आदि अनेक प्रकार के inkFk द्वारा **रसना की चेष्टा पूरी करते हैं।**

पीने के लिए सादे पानी के स्थान पर कई प्रकार के शरबत, चाय, काफी (coffee), कोका&कोला (coca-cola), बीयर (beer), शराब आदि की आदतें डाली हुई हैं, जो **महंगें होने के इलावा स्वास्थ्य के लिए हानिकारक भी हैं।** इनके मुकाबले पर ताज़े फलों का रस (fruit juice) स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त लाभदायक है।

इसी प्रकार ईश्वर की अनेक देनों में से ताज़े फल तथा सब्जियाँ भी श्रेष्ठ बख्शिश हैं, जो स्वास्थ्य के लिए बहुत गुणकारी तथा लाभदायक हैं।

इन लाभदायक फलों को हम दवाईयाँ (preservatives) डाल कर डिब्बों या बोतलों में बंद करके **'बासी'** कर के खाते हैं।

सब को पता है कि ये दवाईयाँ (preservatives) स्वास्थ्य के लिए **हानिकारक** हैं, परन्तु फिर भी हमारी रसोईघर की शैल्फें (kitchen shelves) तथा खाने के मेज़ (dining table) इन रंग-बिरंगे मन मोहक लेबलों (labels) वाले डिब्बों तथा बोतलों से **सुसज्जित होते हैं ।** वास्तव में यह **सज्जा** (decoration) **अथवा 'फैशन-परस्ती' हमारे स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है।**

दूसरी ओर इन्सान की बनायी हुई मिठाईयाँ (man made sweets) **स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हैं तथा फल-सब्जियों से महँगी भी हैं।**

हम रसना की चेष्टा के इतने गुलाम हो गये हैं कि सब कुछ जानते-बूझते भी **हानिकारक तथा महँगी मिठाईयों को 'ईश्वरीय मिठाई' फल-फ्रूट से अधिक, 'महत्व' देते हैं।**

इस **'रसना की गुलामी'** में केवल स्वयं ही नहीं जकड़े हुए, अपितु अपनी 'औलाद' अथवा **अगली पीढ़ी को यह 'रसना की चेष्टा' की गुलामी 'सिखला' रहे हैं।**

यही कारण है कि हमारी **सेहत तबाह हो रही है तथा हम अनेक बीमारियों के शिकार हो रहे हैं। आर्थिक रूप से हमारे हाथ भी 'तंग'** ही **रहते हैं** — जिस कारण हमें अधिक आमदनी के लिए **रिश्वतखोरी आदि के तुच्छ 'हथकंडे' प्रयोग करने पड़ते हैं।**

बाबा होरु खाणा खुसी खुआरु ।।
जितु खाधै तनु पीड़ीऐ मन महि चलहि विकार ।। (पृ. 16)

आश्चर्य की बात तो यह है कि इन भाँति-भाँति के **फैशनों की —**

कोई **घोषणा** नहीं होती
कोई **प्रचार** नहीं होता
कोई **हुकुम** नहीं होता

कोई **मजबूरी** नहीं होती

जबरदस्ती ठूसे नहीं जाते

फिर भी हम स्वतः, सहज स्वभाव इन फैशनों की बड़ी बेताबी से इन्तजार करते रहते हैं तथा इनके कायल होकर बड़े चाव तथा उत्साह से पूर्ति करते हैं।

दूसरी ओर हमारे धर्म/गुरू/अवतार/संतो/भक्तों/महापुरुषों के लाभदायक, कल्याणकारी, लोक/परलोक सुहेले करने वाले **सदीवी उपदेशों** को पढ़/सुनकर बेपरवाही से **'अनसुना' कर देते हैं** तथा **ध्यान देने, समझने या कमाने की आवश्यकता ही नहीं प्रतीत होती!**

खेद की बात यह है कि हमारे बच्चे अथवा **आने वाली पीढ़ी भी सहज/स्वभाव,** अनजाने, बिना किसी प्रचार के, देखा/देखी ही यह **फैशन परस्ती सीख रही है तथा फैशन की गुलाम बन रही है।**

इस **अनावश्यक 'फैशन परस्ती' तथा हानिकारक 'रस/कस की चेष्टा' में हम इतने गलतान हो गये हैं कि यह 'फैशन' हमारे जीवन के हर पक्ष में धँस/बस/समा चुका है तथा 'फैशन परस्ती' हमारा धर्म बन चुका है, जिसे हम बड़े चाव, उत्साह तथा श्रद्धा/भाव से मानने या कमाने के लिए सदैव तत्पर रहते हैं तथा जिसकी पूर्ति के लिए हमारा बहुत सारा समय, बुद्धि, ध्यान, मेहनत तथा माया बरबाद होती है।**

यदि इतने चाव, ध्यान, श्रद्धा/भाव तथा प्यार से ईश्वर की 'भक्ति' करें, तब इस मायिकी भवसागर से हमारा आत्मिक कल्याण हो सकता है।

(क्रमशः ....)